सामाजिक - सांस्कृतिक संचेतना के परिप्रेक्ष्य में उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा- एक अध्ययन

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. हिंदी की उपाधि हेतु
प्रस्तुत शोध प्रबंध

अनुसंधित्सु

अंजना मिश्रा

शोध निर्देशक

डॉ. अनीता शुक्ल

सहायक आचार्य,

हिंदी विभाग,

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा।

हिंदी विभाग, कला संकाय

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा, गुजरात

2021

Samajik-Sanskritik Sanchetna Ke Pariprekshya Mein Upanyaskar Vrindavanlal Verma: Ek Adhyayan

सामाजिक - सांस्कृतिक संचेतना के परिप्रेक्ष्य में उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा- एक अध्ययन

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. हिंदी
की उपाधि हेतु प्रस्तावित शोध प्रबंध की रूपरेखा

अनुसंधित्सु

अंजना मिश्रा

शोध निर्देशक

डॉ. अनीता शुक्ल

सहायक प्रोफेसर,

हिंदी विभाग,

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा।

हिंदी विभाग, कला संकाय

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा, गुजरात

2021

शोधसार / Abstract

वृन्दावनलाल वर्मा जी प्रेमचंद के बाद हिंदी के दूसरे महान उपन्यासकार एवं हिंदी के सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं, जिन्होंने न केवल हिंदी में ऐतिहासिक उपन्यास की परंपरा का प्रवर्तन किया, बल्कि प्रेमचंद की कथा-परंपरा का भी विस्तार किया। हिंदी में उनकी समता का दूसरा कोई ऐतिहासिक उपन्यासकार ही नहीं है। जिस समय उपन्यास क्षेत्र में उनका आविर्भाव हुआ, उस समय हिंदी में ऐतिहासिक उपन्यासों का सर्वथा अभाव था। वर्माजी ने जिस अथक परिश्रम और लगन से उपन्यासों की इस रिक्त अंग की पूर्ति की वह प्रशंसनीय है । उन्होंने न केवल ऐतिहासिक उपन्यास लिखे बल्कि सामाजिक उपन्यास भी लिखे । सामाजिक उपन्यसों में भी उनका प्रयास कम सराहनीय नहीं है ।

वर्माजी ने जिस समय हिंदी उपन्यासों के क्षेत्र में प्रवेश किया उस समय तक हिंदी साहित्य में बहुत कुछ प्रौढ़ता आ चुकी थी। प्रसाद और प्रेमचंद सदृश प्रतिभाओं ने उपन्यासों के क्षेत्र में एक युग प्रवर्तन उपस्थित कर दिया था, परंतु उपन्यास के विषय प्रधानत: सामाजिक थे। वर्माजी को अपने उपन्यासों का विषय चुनने में कोई कठिनाई नहीं हुई कारण कि प्रारंभ में उन्होंने सामाजिक उपन्यासों की ओर देखा ही नहीं। अपनी ऐतिहासिक रुचि को तृप्त करने के लिए उनके जाने-बूझे बुन्देलखंड का इतिहास उनके सामने ही था। अपनी जन्मभूमि से उन्हें अत्यधिक मोह रहा है। वहीं पर उन्होंने जन्म लिया, पले-बढ़े। बुन्देलखंड के इतिहास ने उन्हें ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की प्रेरणा प्रदान की और वे उस ओर प्रवृत्त भी हुए। वर्माजी को लोगों ने बुन्देलखंड का उपन्यासकार और उनके उपन्यासों को 'बुन्देलखंडीय उपन्यास' भी कहा है। इसका कारण यही है कि उनके अधिकांश उपन्यासों का क्षेत्र यही बुन्देलखंड है । अब तक उन्होंने जितने भी उपन्यास लिखे हैं एक या दो को छोड़कर सभी का क्षेत्र बुन्देलखंडीय ही रहा है, फिर वह ऐतिहासिक उपन्यास हो या फिर सामाजिक उपन्यास ही क्यों न हो ।

उपन्यास हिंदी साहित्य की अत्यधिक लोकप्रिय एवं बहुचर्चित विधा है। गद्य साहित्य की विविध विधाओं में उपन्यास की जितनी उन्नति अनेक दिशाओं में हुई है उतनी किसी अन्य विधा की नहीं। इसकी लोकप्रियता के अनेक कारण हैं। यह तो सत्य है कि अपने कथा रस के कारण उपन्यास सामान्य से सामान्य पाठक को भी बाँधे रखता है। साथ ही उपन्यास में मानव के आंतरिक जीवन और बाह्य जीवन संघर्ष के चित्रण का पूरा अवकाश रहता है।

उपन्यास साहित्य की एक ऐसी विधा है, जो समाज को प्रस्तुत करने का सबसे प्रबल माध्यम है । इसका सीधा संबंध मानव समुदाय से होता है और इसी संबंध की पृष्ठभूमि में उभरते हैं, समाज विशेष के सांस्कृतिक मूल्य । भारतीय संस्कृति मानव जीवन की अमूल्य धरोहर है। अपनी गौरवमयी सांस्कृतिक परंपरा के कारण ही हजारों हजारों वर्ष तक पराजित रहने के बाद भी भारतीय संस्कृति ने अपनी नींव को बनाए रखा और वह विलुप्त नहीं हुई। समाज में सांस्कृतिक संचेतना बनाए रखने में अनेक संस्थापकों, समाज सुधारकों ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इनके अथक परिश्रमों के फलस्वरूप आज अनेक नए नियम, कानूनों द्वारा समाज में व्याप्त सामाजिक कुप्रथा पर प्रतिबंध लगाकर निर्योग्यताओं को दूर किया गया है। उन्हें पुरुषों के समान अधिकार दिए गए जिससे समाज में नवीन सांस्कृतिक परिवर्तन आए, खास करके स्त्रियों की स्थिति में। सच कहा जाए तो संस्कृति ही विभिन्न प्रकार की सांस्कृतिक परंपराओं के द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व में सांस्कृतिक चेतना पैदा करती है और उसके व्यक्तित्व का विकास करती है। यदि किसी व्यक्ति या समाज की कोई संस्कृति ही ना हो तो वह व्यक्ति या समाज सही तरीके से अपना जीवन निर्वाह नहीं कर सकता है, क्योंकि संस्कृति के अभाव में व्यक्ति या समाज पशुवत होता है। यह संस्कृति ही है जो मानव व्यवहार को नियमित कर उसे संस्कारों से भर देती है।

मुझे अपनी संस्कृति से विशेष मोह रहा है। इसलिए जब मुझे शोध कार्य करने का अवसर मिला तो मैंने इसी विषय को अपना माध्यम बनाया। सांस्कृतिक मूल्यों का पोषण छायावादोत्तर उपन्यासों में अधिक हुआ है। विशेषकर वृन्दावनलाल

वर्मा के उपन्यास प्रचुर मात्रा में हमारी सांस्कृतिक परंपराओं को उद्घाटित करते हैं। उनके उपन्यासों में उत्तर वैदिक युग से लेकर 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण तक का इतिहास सिमटा हुआ है । उन्होंने हर उस युग को छुआ है । जिसमें सांस्कृतिक क्षेत्रों में भारत ने अपनी छवि को सजाया-संवारा है। 'भुवन विक्रम' की वैदिक समाज व्यवस्था, दसवीं- ग्याहरवीं शताब्दी की नृत्य और स्थापत्य कला, 15वीं शताब्दी का शौर्य, 18वीं शताब्दी में 'माधव जी सिंधिया' की देश में अंग्रेजों के आगमन की समस्या और मुगलों की गिरती साख से बचाने की छटपटाहट, 1857 की क्रांति तथा दुर्गावती के माध्यम से चित्रकला और न्यायप्रियता, अहिल्याबाई के माध्यम से शौर्य न्याय और भक्ति की स्थापना के प्रयास, हमारे परंपरागत मूल्य हैं, जो हमारे सांस्कृतिक आयामों को, उनके विविध पहलुओं के माध्यम से छूते हैं । उनके ये ऐतिहासिक उपन्यास इसलिए और महत्वपूर्ण हो उठे हैं क्योंकि इनमें हमारे उस इतिहास को जिसे अंग्रेजों ने तोड़ मरोड़ कर, अपने स्वार्थ की धूल से धुंधला बनाकर प्रस्तुत किया था, तथ्यात्मक जानकारी के आधार पर सत्य रूप में सामने लाया गया है । उनके सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और कुछ राजनीतिक घटनाओं को आधार बनाकर लिखे गए उपन्यास भी हैं। इन सभी में हमारी सामाजिक परंपराओं और चिंतन धाराओं को एक स्थायी स्वरूप प्रदान किया गया है। एक आदर्श जीवन पद्धति तथा जीवन दर्शन हमें इन कृतियों में निरंतर दिखाई देता है। इसी स्वस्थ सांस्कृतिक परंपरा ने मुझे उनकी कृतियों की ओर आकर्षित किया । जब मैंने लेखक वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों पर काम करने की चर्चा अपनी निर्देशिका आदरणीय डॉ. अनीता शुक्ल जी से की, तो उन्होंने मेरे इस शोध कार्य में अपना योगदान देने की सहर्ष स्वीकृति दे दी, और मैंने अपने शोध प्रबंध का विषय 'सामाजिक - सांस्कृतिक संचेतना के परिप्रेक्ष्य में उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा- एक अध्ययन' चुना । यूँ तो वर्माजी और उनके उपन्यासों पर अनेकों काम हो चुके है परंतु उनके उपन्यसों में सामाजिक- संस्कृतिक संचेतना के परिप्रेक्ष्य में अब तक विस्तार पूर्वक कोई काम नहीं हुआ हैं । मेरा मुख्य विषय सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना से जुड़ा हुआ है । जिस पर मैंने अधिक भार दिया है। सांस्कृतिक संचेतना से मेरा अभिप्राय सांस्कृतिक

जागृति से है। सांस्कृतिक जागृति जो प्रत्येक संस्कृति सम्पन्न, विवेकशील मनुष्य की पहचान है। अपनी इसी ज्ञानात्मक मनोवृत्ति का प्रयोग लेखक अपनी सर्जनाओं में करता है। जब हम किसी लेखक के साहित्य का अध्ययन करते है तब उसकी सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के साथ तादात्म्य का अनुभव करते हैं। उसके सांस्कृतिक अनुभवों से हमारा साधारणीकरण होता है और जब हम इस प्रकार की कृतियों की आलोचना सांस्कृतिक संचेतना के आलोक में करते हैं तब इस प्रकार का अध्ययन सामने आता है।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से मैंने प्रस्तुत शोध प्रबंध को छ: अध्यायों में विभक्त किया है । प्रथम अध्याय में मैंने समाज और सांस्कृतिक संचेतना पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है। समाज और संस्कृति के बीच घनिष्ठ संबंध है । प्रत्येक समाज में संस्कृति के तत्व पाए जाते हैं। समाज के बिना न तो संस्कृति की कल्पना की जा सकती है न ही संस्कृति के बिना समाज की । संस्कृति के विभिन्न अंगों या पक्षों से संस्कृति का निर्माण होता है । इन अंगों का समावेश मनुष्य के आंतरिक जीवन से होता है। संस्कृति विरासत के रूप में मिलती है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होती रहती है और यह हस्तांतरण की क्रिया चलती रहती है। संस्कृति ही व्यक्ति को समाज, राज्य एवं राष्ट्र से परिचित कराती है और समाज में मानव दृष्टिकोण को व्यापक बनाकर उनमें सामूहिक भावना उत्पन्न करने का कार्य करती है, जिससे व्यक्ति सहयोग के आधार पर एक दूसरे से जुड़े रहें और अपने दृष्टिकोण को उदार बनाकर दूसरे व्यक्ति या समूह के लिए सोचें। संस्कृति समाज में नई आवश्यकताओं को जन्म देती है और व्यक्ति के मन में नवीन चेतना का संचार करती है। भारतीय संस्कृति मानव जीवन की अमूल्य धरोहर है । अपनी गौरवमयी सांस्कृतिक परंपरा के कारण ही हजारों वर्षों तक पराजित रहने के बाद भी भारतीय संस्कृति ने अपनी नींव को बनाये रखा और वह विलुप्त नहीं हुई । समाज में सांस्कृतिक संचेतना बनाये रखने में अनेक संस्थापकों, समाज सुधारकों ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इनके अथक् परिश्रमों के फलस्वरूप आज अनेक नये नियम कानूनों द्वारा समाज में व्याप्त अनावश्यक सामाजिक

कुप्रथाओं पर प्रतिबंध लगाकर स्त्रियों की निर्योग्यताओं को दूर किया गया है। उन्हें पुरुषों के समान अधिकार भी दिए गए। जिससे समाज में नवीन सांस्कृतिक परिवर्तन आये, खास करके स्त्रियों की स्थिति में ।

संस्कृति के अंतर्गत प्रथाएँ, परंपराएँ, मान्यताएँ, रीति-रिवाज, व्यवहार, सोच-विचार, विश्वास, कला, धर्म, साहित्य, आदर्श आदि का समावेश होता है। यह सभी संस्कृति के विभिन्न अंग या पक्ष हैं जिनसे संस्कृति का निर्माण होता है। इन सभी अंगों का अपना एक महत्व होता है। संस्कृति के विभिन्न अंगों का संबंध मानव के आंतरिक जीवन से होता है। संस्कारशील व्यक्ति इन्हें व्यवहार में लाने की सचेत कोशिश करता है । यह सचेत प्रयत्न दो स्तरों पर चलते हैं। एक तरफ अमानवीय, अनैतिकता का अस्वीकार एवं तिरस्कार दूसरी ओर मानवीय नैतिकता का स्वीकार एवं संस्तुति । इस प्रकार सांस्कृतिक संचेतना व्यक्ति और जीवन को निरंतर सम्पन्न और समृध्द बनाती है। यह सांस्कृतिक अंग समाज में एकता बनाए रखने में, सामाजिक नियंत्रण बनाए रखने में और समाज में मानव व्यवहारों पर अंकुश रखने में अपनी अहम् भूमिका निभाते हैं। जैसे प्रथाओं, परंपराओं को लें। इन प्रथा-परंपराओं का मानव जीवन में बड़ा महत्त्व है। इनमें व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु तक अपना संपूर्ण जीवन निर्वाह करता है। प्रथाओं, परंपराओं का पालन कर व्यक्ति आत्मविश्वास संबंधी आदर्शों को सिद्ध करता है और समाज में सामाजिक मूल्यों को स्थापित करता है।

द्वितीय अध्याय सामाजिक सांस्कृतिक उपन्यासों की पृष्ठभूमि है। उपन्यास हिंदी साहित्य की अत्यधिक लोकप्रिय एवं बहुचर्चित विधा है। गद्य साहित्य की विविध विधाओं में उपन्यास की जितनी उन्नति विश्व में हुई है उतनी किसी अन्य विधा की नहीं। इसकी लोकप्रियता के अनेक कारण हैं। उपन्यास कथा साहित्य का आधुनिक रूप है। पाश्चात्य साहित्य से बांग्ला साहित्य में और बांग्ला साहित्य में से हिंदी साहित्य में उपन्यास विधा का आविर्भाव हुआ है । हिंदी साहित्य में उपन्यास का प्रारंभ 19वीं शताब्दी से माना जाता है। कथा के विविध अवयवों की छानबीन लिखित और मौखिक परंपरा में इससे पहले से भी की जा सकती है किंतु आधुनिक

अर्थ में उपन्यास 19वीं शताब्दी की देन है जिसकी अभिव्यक्ति का माध्यम गद्य है । हिंदी साहित्य का प्रथम उपन्यास आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लाला श्रीनिवास दास कृत 'परीक्षा गुरु' को स्वीकार किया है। हिंदी उपन्यास के क्रमिक विकास को अध्ययन की सुविधा के लिए अधिकांश विद्वानों ने विभिन्न भागों में विभाजित किया है। प्रेमचंद जी का आविर्भाव हिंदी साहित्य के क्षेत्र में चमत्कार माना जाता है। उनके साथ ही हिंदी उपन्यास में नया मोड़ आता है बल्कि यों कहा जाए कि वास्तविक अर्थों में उपन्यास युग आरंभ होता है। उन्होंने हिंदी कथा साहित्य को मनोरंजन के स्तर से उठाकर जीवन के साथ सार्थक रूप में जोड़ने का काम किया। चारों ओर फैले हुए जीवन और अनेक सामाजिक समस्याओं, किसानों का शोषण, निर्धनता, अशिक्षा, अंधविश्वास, दहेज जैसी कुप्रथा और समाज में नारी की स्थिति आदि समस्याओं को उन्होंने अपने उपन्यासों में स्थान दिया।

शोध प्रबंध का तृतीय अध्याय वृन्दावनलाल वर्मा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से संबंधित है। वृन्दावनलाल वर्मा जी प्रेमचंद के बाद हिंदी के दूसरे महान उपन्यासकार एवं हिंदी के सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं, जिन्होंने न केवल हिंदी में ऐतिहासिक उपन्यास की परंपरा का प्रवर्तन किया, बल्कि प्रेमचंद की कथा-परंपरा का भी विस्तार किया। वर्मा जी सरल, संयमी एवं विनम्र स्वभाव वाले लेखक हैं। वे जैसे जो कुछ हैं, अत्यंत सहज और स्पष्ट हैं। वे अन्याय के साथ समझौता न करने वाले व्यक्ति हैं। वर्मा जी ऐतिहासिक उपन्यासों के प्रणेता हैं। उन्होंने हिंदी साहित्य के उपन्यासों को एक नई दिशा प्रदान की। ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना ही इनका साधना क्षेत्र है। वर्मा जी की रचनाएं साहित्य की अनेक विधाओं में हैं। उपन्यास, नाटक, कहानी आदि प्राय: सभी गद्य की विधाओं में इन्होंने लिखा है। इन्होंने कविताएँ भी लिखीं परंतु सफलता न देख कर इस क्षेत्र को छोड़ दिया। उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा हिंदी के ऐसे उपन्यासकार हैं जिन्होंने स्वतंत्रता से पूर्व उपन्यास लेखन प्रारम्भ किया और निरंतर लिखते रहे ।

चतुर्थ अध्याय वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यास साहित्य में सामाजिक संचेतना की अभिव्यक्ति से है । सर्वसाधारण के कुछ सामान्य कल्याण

की पूर्ति के लिए शांतिपूर्वक प्रयत्नशील, मनुष्य का समूह समाज है। इन प्रयत्नों में उसके पारस्परिक व्यवहार, प्रेम सहानुभूति, आदि आ जाते हैं। परंतु कभी-कभी कुछ बाधाएं भी आ जाती हैं। यह बाधाएं प्राय: उसकी स्वार्थ भावना के कारण आती हैं। इन्हीं प्रयत्नों, बाधाओं, निष्कर्षों को लेकर उपन्यासकार सामाजिक उपन्यासों का निर्माण करता है।

इतिहास की अपेक्षा समाज को लेकर चलने वाला उपन्यास लिखना अधिक सहज होता है। इतिहास को लेकर चलने वाले उपन्यास में उपन्यासकार को पीछे मुड़कर देखना होता है। किसी ऐतिहासिक सत्य को यथावत बनाए रखकर बड़ी खोज पूर्ण दृष्टि से अन्य सभी तथ्यों, वेशभूषा, परिवेश, भाषा व्यवहार, विचार और तत्कालीन सामाजिक भावनाओं का पता लगाना होता है, तब जाकर कहीं वह उसके उपन्यास भवन को खड़ा कर पाता है। सामाजिक उपन्यासों में यह सब रचनात्मक कठिनाइयां नहीं होती। विस्तृत सामाजिक परिवेश उपन्यासकार के सामने फैला पड़ा होता है। उसमें से उसे अपने हृदय को प्रभावित करने वाली किसी भी घटना से प्रेरणा मिली नहीं कि उसका सृजक कलाकार, निर्माण कार्य में लग जाता है और सामाजिक उपन्यास रूपी भवन तैयार हो जाता है। फिर भी कुछ कठिनाइयां उपन्यासकार के सामने आ सकती हैं, जैसे किसी सामाजिक समस्या या मान्यता के संबंध में अपना मत स्थिर कर पाने की समस्या या सामाजिक मान्यता और स्वयं के मत में टकराव की समस्या। जो भी हो कलाकार सृजक होने के नाते जो भी निर्माण करता है वह सुंदर ही होता है। इसलिए इन उपन्यासों में भी कथाकार का आत्मिक सौंदर्य छिपा नहीं रह पाता।

वर्मा जी ने अपने चारों ओर के परिवेश से भी उसी प्रकार प्रेरणा ली है, जिस प्रकार इतिहास की कथाओं, भग्न मूर्तियों की भाषाओं, प्राचीन दुर्ग की प्राचीरों से ऐतिहासिक उपन्यास लिखे जाने की प्रेरणा ली है। वर्मा जी ने अपने सामाजिक उपन्यासों का निर्माण विविध सामाजिक समस्या जैसे वैवाहिक समस्या- दहेज प्रथा, विधवा प्रथा, अनमेल विवाह, दासी प्रथा आदि, ग्रामीण समस्या, धर्म, जाति, छुआछूत की समस्या, आदि अनेक समस्याओं के आधार पर किया है। इन

समस्याओं को लेकर वर्मा जी ने 'लगन', 'संगम', 'कुंडली चक्र', 'प्रेम की भेंट', आदि उपन्यासों की रचना की है। इनकी यह सामाजिक समस्याएं ऐतिहासिक उपन्यासों में भी मिलती हैं जैसे 'टूटे काँटे', 'झांसी की रानी', 'कचनार', 'महारानी दुर्गावती' आदि उपन्यासों में। इन्हीं सभी समस्याओं और समस्याओं का निराकरण वर्मा जी के उपन्यासों के माध्यम से पाठकों के समक्ष आए हैं।

उपन्यासों की पृष्ठभूमि के अंतर्गत उपन्यास के कथावस्तु के अनुसार किसी भी राष्ट्र अथवा समाज एवं जनजाति के आचार-विचार, वेशभूषा, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण किया जाता है । जिससे उपन्यास में स्वाभाविकता एवं सत्यता आ जाती है और उपन्यास यथार्थ लगता है । सामाजिक उपन्यास में लेखक को अपने आसपास का समसामायिक वातावरण, अपने अनुभवों का सजीव चित्रण प्रस्तुत करना पड़ता है जबकि ऐतिहासिक उपन्यास में लेखक को उस काल की पृष्ठभूमि का चित्रण प्रस्तुत करना होता है । इसके लिए उसे कल्पना का भी सहारा लेना पड़ता है परंतु वह इतिहास को तोड़-मरोड़ नहीं सकता । अतः उपन्यासकार की अपेक्षा ऐतिहासिक उपन्यास के लिए यह कार्य अधिक कठिन होता है। इसके लिए उसे इतिहास का गहन अध्ययन करना पड़ता है । बिना तथ्यों के एवं जानकारी के लेखक ऐतिहासिक उपन्यास का निर्माण नहीं कर सकता । जहाँ इतिहास नहीं है वहाँ वह अपनी कल्पना का प्रयोग कर सकता है परंतु इसकी भी कुछ सीमा होती है । अपनी इच्छा अनुसार लेखक अपने विचारों को ऐतिहासिक उपन्यासों में ठूँस नहीं सकता अन्यथा उसकी रचना विकृत हो जाएगी ।

वर्माजी ने अपने ऐतिहासिक और सामाजिक दोनों प्रकार के उपन्यासों में देशकाल का सफल निर्माण किया है। उनका एक उपन्यास 'भुवन विक्रम' जिसका उत्तर वैदिक काल से संबंध है। शेष उपन्यास 11वीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी के भारत से संबंधित है। उनके दोनों प्रकार के उपन्यासों के कथाओं का क्षेत्र अधिकांशतः बुन्देलखंड रहा है। बुन्देलखंड के अतीत के इतिहास को वर्माजी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में जीवंत किया है । उनके सभी ऐतिहासिक उपन्यासों में भारत राजनीतिक दृष्टि से उथल-पुथल अवस्था वाला रहा है । 'गढ़ कुंडार' को ही लें - प्रस्तुत उपन्यास

13वीं - 14वीं शताब्दी से संबंधित है। उस काल में मुसलमानों का आधिपत्य देश पर हो गया था। फिर भी छोटे-छोटे हिन्दू राज्य भर में इधर-उधर बिखरे हुए थे, हिन्दू-राजाओं में भी अंदर-अंदर युद्ध होते रहते रहते थे, गृहयुद्ध भी होते रहते थे । जरा-जरा सी बात पर तलवार म्यान में से खिंच जाती थी, आन पर मर मिटना इनके लिए साधारण सी बात होती थी, कन्या अपहरण, प्रतिशोध की भावना, मान-जात्याभिमान भावना भी अपने पूरे वेग पर थी । ऐतिहासिक साहित्यों में उस समय की राजनीतिक अवस्था का वर्णन मिलता है ।

इस प्रकार अपने सभी ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना युगीन राजनीतिक, आर्थिक, भौगोलिक परिस्थितियों की पृष्ठभूमि को आधार बनाकर की है ।

पंचम अध्याय वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यास साहित्य में सांस्कृतिक संचेतना है। वर्माजी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के कथानकों की रचना बुन्देलखंड की इतिहास प्रसिद्ध घटनाओं एवं इतिहास की उज्ज्वल विभूतियों के जीवन के आधार पर की है। इतिहास में ऐसी प्रसिद्ध घटनाओं की भरमार है । बुन्देलखंड की वीर प्रसू भूमि ने अपने अतीत में अनेक शूरवीर, पराक्रमी और आत्मत्यागी सन्तानों को जन्म दिया है। इसलिए प्रत्येक किले, गढ़ी, पर्वत, कन्दरा, भूमि के चप्पे-चप्पे पर इसकी सन्तति की गौरव गाथा लिखी हुई है । इसी भूमि में वर्माजी ने जन्म लिया, वे पले-बढ़े। वस्तुतः बुन्देलखंड के अनेक इतिहास प्रसिद्ध घटना एवं महान विभूतियों से प्रेरणा पाकर ही वर्माजी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के कथानक का गठन किया है ।

वर्माजी के ऐतिहासिक उपन्यासों के कथानक के चुनाव की पहली और बड़ी विशेषता यह है कि - वे जैसा, जो कुछ भी लिखते हैं, जिस किसी भी व्यक्ति घटना, स्थान आदि के संबंध में तो उससे संबंधित विख्यात ऐतिहासिक तथ्यों, ग्रंथों, परंपरा, लोकगीत, जनश्रुति आदि की पूरी जानकारी अपनी पुस्तक के परिचय पृष्ठ में दे देते हैं । अपने प्रत्येक पृष्ठ के आरंभ में उन्होंने स्पष्ट लिखा है - अमुक घटना या पात्र सत्य है और अमुक काल्पनिक । इसके अतिरिक्त वे तथ्यों की पुष्टि करने के लिये

तत्सम्बन्धित स्थलों पर बार-बार जाकर जानकारियाँ एकत्रित कर, उसे अपनी लेखनी में शामिल करते हैं। बिना किसी जानकारी के वह कलम तक नहीं उठाते । उससे इस बात का आभास होता है कि वे कितनी गहराई से जाकर इतिहास को देखते हैं।

'मृगनयनी', 'माधवजी सिंधिया', 'रानी लक्ष्मीबाई', 'महारानी दुर्गावती', 'अहिल्याबाई' आदि उनके शुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास हैं । इन उपन्यासों में इतिहास सम्मत तथ्यों को ज्यों का त्यों स्वीकार किया गया है । 'मृगनयनी' उपन्यास में मृगनयनी और मानसिंह का विवाह, मानसिंह द्वारा ग्वालियर में मानमंदिर और गुजरी महल की स्थापना, सिकन्दर लोदी, ग्वालियर का किल्ला आदि, 'माधवजी सिंधिया' में पानीपत का युद्ध, माधवजी सिंधिया-गन्ना बेगम का प्रसंग, रानेखा, उम्दा बेगम, जवाहर सिंह, नजीबखां गुलाम कादिर आदि पात्रों से संबंधित सभी प्रसंग, 'रानी दुर्गावती' में दुर्गावती और दलपति सिंह का विवाह, शेरशाह - राजा कीर्तिसिंह का युद्ध, शेरशाह की मृत्यु, दलपति सिंह की मृत्यु के पश्चात् रानी दुर्गावती का राज्य शासित करना, अकबर के आदेश अनुसार आसफखां का रानी दुर्गावती पर आक्रमण करना, बाजबहादुर से जुड़े प्रसंग आदि घटनाएँ इतिहास सम्मत हैं। इसके अतिरिक्त उनके उपन्यासों में जहाँ इतिहास मौन है तथा धूमिल हो गया है वहाँ उन्होंने जनश्रुति तथा किंवदंतियों का सहारा लिया है । इसका भी ब्यौरा वर्माजी ने उपन्यासों के परिचय पृष्ठ में दे दिया है ।

प्रस्तुत शोध प्रबंध का षष्ठ अध्याय वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों का शिल्प है । उपन्यास मानव जीवन का चित्रण है अतः उपन्यासों में पात्रों का चरित्र-चित्रण एक विशिष्ट स्थान रखता है । वर्माजी पात्रों के निर्माण में काफी सफल हैं । अनेक प्रकार के पात्र उनके उपन्यासों में देखने को मिलते हैं। उन्होंने अपने उपन्यासों में उच्च सामान्तीय वर्ग से लेकर जन साधारण तक के पात्रों का चित्रण अपनी कुशल लेखनी द्वारा किया है, एक अद्भुत सौन्दर्य उपस्थित हो गया है । ऐसा प्रतीत होता है कि वर्माजी का इन पात्रों से कोई संबंध है । चरित्रों की इस बहुरंगी सृष्टि में विभिन्न मनोवृत्तियों वाले पात्रों की सत्ता है । परंतु सभी का चित्रण, उनकी चारित्रिक विशेषता, मनोवृत्तियों का उभार, उनकी सबलताओं, दुर्बलताओं का चित्रण उन्होंने इतनी

व्यापकता और गहराई के साथ किया है कि लगता है कि वर्माजी उनसे भली-भाँति परिचित हैं । कुछ चरित्र तो स्पष्ट वर्माजी के जाने बूझे हुए हैं । 'लगन' का देवीसिंह, 'गढ़कुंडार' का अर्जुन कुम्हार ऐसे ही चरित्र हैं ।

वर्माजी ने अपने उपन्यासों में सशक्त एवं वीर नारी पात्रों का चित्र प्रस्तुत किया है और नारी पात्रों को पुरुष पात्रों की समानता में ऊँचा स्थान दिया है । उनकी नारी पात्र पुरुषों से कहीं ऊँची है । वर्माजी के अधिकतर उपन्यास नायिका प्रधान हैं और उन्हीं के नाम पर उपन्यासों का नामकरण भी किया है । 'झाँसी की रानी' में रानी लक्ष्मी बाई, 'अहिल्याबाई' में अहिल्याबाई, 'मृगनयनी' में मृगनयनी, 'कचनार' में कचनार, 'महारानी दुर्गावती' में 'रानी दुर्गावती' आदि मुख्य नायिकाएँ हैं ।

उनमें वीर, शौर्य, आदर्श, साहस, संयम, कष्ट सहिष्णु, कर्तव्यपरायणता, उदारता, राष्ट्रप्रेम, अस्त्र-शस्त्र संचालन आदि गुण विद्यमान हैं। राष्ट्रप्रेम की भावना उनमें कूट-कूटकर भरी है। अपने लक्ष्य से वह कभी विचलित नहीं होती । देशप्रेम की रक्षा के लिए वह कठिन से कठिन परिस्थितियों से भी संघर्ष लेती है और युद्ध के मैदान में दुश्मनों का सामना करती है। 'महारानी दुर्गावती' उपन्यास में रानी दुर्गावती अपने धर्म, स्वतंत्रता और मानवता की रक्षा में मुगल बादशाह अकबर से मुठभेड़ करने के लिए भी तैयार हो जाती है

वर्माजी के पात्रों की भाषा उनकी योग्यतानुसार है। उन्होंने हर बार पात्रों के स्तर के अनुसार भाषा का प्रयोग किया है। उन्होंने मुसलमानों तथा पठानों से उर्दू, जनसाधारण से बुन्देली तथा अंग्रेज पात्रों से साधारण अंगरेजी व टूटी-फूटी हिंदी बुलवाई है । स्वाभाविकता की रक्षा के कारण ही इनके वार्तालाप पाठकों को नीरस नहीं लगते तथा कथा को अग्रसर करने में सहायक होते हैं। वर्माजी के बाल-सुलभ वार्तालाप भी सुन्दर बन पड़े हैं । वर्माजी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में भावानुकूल भाषा का सुन्दर प्रयोग किया है। भिन्न-भिन्न मनोविकारों एवं भावावेशों के समय कथनों में भी अन्तर आया है। निश्चय ही क्रोध का कथन वैसा ही नहीं हो सकता

जैसा करुण दशा का । श्रृंगार के समय की वार्ता क्रोध के समय से भिन्न होगी । लेखक ने इस बात का भी ध्यान रखा है ।

वृन्दावनलाल वर्मा भाषा-प्रयोग की दृष्टि से उदार हैं। वे प्रमुखतः सरल हिंदी के प्रयोग के पक्षपाती है । वर्मा जी की भाषा का स्वरूप चार प्रकार के शब्दों से निर्मित है। उनकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्द भी है, तद्भव शब्दों का भी उसमें प्राचुर्य है एवं स्थानीय तथा विदेशी शब्दों की भी उसमें सत्ता है । इन चारों के मेल ने उनकी भाषा को रचा है जो सुन्दर ही कही जा सकती है । इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने ऐतिहासिक एवं सामाजिक उपन्यासों में कहावतों, मुहावरों और सूक्तियों का भी प्रयोग किया है । उनके उपन्यासों में कहावतों का प्रयोग कहीं पात्रों के माध्यम से तो कहीं उनके वर्णनों के माध्यम से किया है। लेखन शैली भी उपन्यास शिल्प का महत्त्वपूर्ण पक्ष है । प्रत्येक व्यक्ति की बातचीत, लिखने-पढ़ने की एक अलग शैली होती है, जिससे वह जाना-पहचाना जाता है। वर्माजी की लेखन-शैली पर उनकी स्पष्ट छाप है, जिससे वे सहज ही पहचाने जा सकते हैं । वर्मा जी ने केवल अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में वरन अपने सामाजिक उपन्यासों में भी यथास्थान वर्णन-शैली का प्रयोग किया है । सच पूछा जाय तो उनमें इस शैली की ही प्रधानता है । विशेष रूप से उपन्यासों में। शैली के गुणों की ओर जब हम दृष्टि डालते हैं तो उसकी रोचकता और धारावाहिकता ही हमारा ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करती है। वर्माजी की शैली में इन दोनों गुणों की सत्ता है। ऐतिहासिक उपन्यासों में यदि गढ़ों, युद्धों, सेनाओं और दरबारों के नाच-रंग तथा हरमों के वर्णन हैं तो सामाजिक उपन्यासों में खेत-खलिहानों, पंचायत-सभाओं और मेले तमाशों तथा तीज-त्योहारों के वर्णन हैं। जंगलों-पहाड़ों, नदी-नालों तथा प्रकृति के अन्य दृश्यों के पृष्ठभूमि में रहने के कारण उनके अनेक कोणों से लिए फोटोग्राफ जैसे वर्णन हैं।

कवि हो या लेखक उनके द्वारा लिखी कोई भी रचना भावहीन नहीं होती, उसके सर्जन के पीछे कोई ना कोई उद्देश्य अवश्य होता है। यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष भी । लेखक के हृदय में कुछ ऐसे प्रश्न उपस्थित होते हैं, जिनको वह समाज के सामने प्रस्तुत करना चाहता है। वर्माजी के प्रत्येक उपन्यास

सोद्देश्य लिखे गये हैं । उनका प्रथम उद्देश्य बुन्देलखंड के अतीत के इतिहास को लोगों तक पहुँचाना है । इसीलिए बुन्देलखंड के अतीत के इतिहास को उन्होंने अपने ऐतिहासिक आधुनिक युग को सामाजिक उपन्यासों का विषय, जिसके अंतर्गत उन्होंने बुन्देलखंड के संपूर्ण समाज का मार्मिक चित्रण किया है । उनका दूसरा उद्देश्य अपने ऐतिहासिक उपन्यासों द्वारा नागरिकों में राष्ट्रीय सम्मान की भावना को जागृत करना है और इस उद्देश्य से 'माधवजी सिंधिया', 'रानी लक्ष्मीबाई', 'रामगढ़ की रानी', 'अहिल्याबाई' आदि जैसे ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की। इन उपन्यासों में वर्माजी ने माधवजी सिंधिया, मुजाहिबजू, महारानी दुर्गावती, अहिल्याबाई, रानी लक्ष्मीबाई जैसे महान योद्धा एवं वीरांगनाओं का जीवन चरित्र प्रस्तुत कर उनमें देश के प्रति राष्ट्रीय भावना, उदारता, कर्तव्य परायणता, त्याग भावना जैसे गुणों को दर्शाया है। जिन्होंने राष्ट्र के सम्मान को बढ़ाने के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया।

मेरा यह शोध भावी पीढ़ी में देशराग, संस्कृति-प्रेम तथा इतिहास-चेतना जगाने में प्रेरणास्रोत बनेगा। व्यक्तिगत रूप से जो सबसे बड़ी उपलब्धि मुझे इस शोध-यात्रा के दौरान हासिल हुई है, वह यह है कि मुझमें मेरे देश के प्राचीन इतिहास और समृद्ध संस्कृति के प्रति आकर्षण एवं अनुराग और बढ़ा है।